बिज़नेस स्टैंडर्ड
वर्ष 12 अंक 56

सबसे बड़ी परीक्षा

सप्ताहांत पर देश के प्रधान न्यायाधीश पर लगे यौन शोषण के आरोप ने सर्वोच्च न्यायालय समेत पूरे देश में हलचल मचा दी। वह यौन शोषण के दोषी हैं या किसी राजनीतिक दुश्मनी के शिकार, यह तो जांच के बाद ही पता चलेगा। इन सारी बातों से परे देश के प्रधान न्यायाधीश रंजन गोगोई के विरुद्ध मामला सर्वोच्च न्यायालय के उन प्रक्रियागत दिशानिर्देशों का भी अहम परीक्षण होगा जो सन 1997 में एक अहम मामले में तय किए गए थे। ये दिशानिर्देश 2013 में कानून में बदल गए। इन नियमों को शुरुआत में विशाखा गाइडलाइन का नाम दिया गया था। यह नाम एक गैर सरकारी संगठन से लिया गया था जिसने पीड़ित की ओर से मामले की पैरवी करते हुए पहली बार यौन शोषण को परिभाषित किया और जिसके बाद 10 से अधिक कर्मचारियों वाले सभी संस्थानों में शिकायत समिति का होना अनिवार्य किया गया। सर्वोच्च न्यायालय ने 2013 में संसद से कानून बनने के बाद अपनी विशाखा समिति भी गठित की। परंतु इस मामले में इसे अमल में नहीं लाया गया। इस संदर्भ में गोगोई के कदमों पर सवाल उठ सकते हैं।

गत वर्ष जनवरी में तत्कालीन प्रधान न्यायाधीश दीपक मिश्रा द्वारा प्रक्रियाओं के अतिक्रमण के खिलाफ हुए न्यायाधीशों के अप्रत्याशित सामूहिक विरोध प्रदर्शन में गोगोई ने भी शिरकत की थी। इस बात ने प्रक्रियाओं और नियम कायदों के पालन को लेकर उनकी छवि बहुत मजबूत की थी। चकित करने वाली बात है कि इसके बावजूद गोगोई खुद पर इन नियमों को लागू करने के अनिच्छुक दिखे। यौन शोषण शिकायत समिति के माध्यम से जांच प्रक्रिया की शुरुआत करना इस मामले में एकदम उचित कदम होता लेकिन इसके बजाय उन्होंने अपने बचाव का एक अस्वाभाविक तरीका चुना। कथित पीड़ित की तुलना में उनकी शक्तिशाली स्थिति का भी बचाव नहीं किया जा सकता। सोलीसिटर जनरल द्वारा आरोपों की सूचना मिलने के बाद गोगोई ने सुनवाई के लिए एक विशेष पीठ बनाया जिसमें न्यायाधीश संजीव खन्ना और न्यायमूर्ति अरुण मिश्रा शामिल थे। उन्होंने कहा कि यह सुनवाई 'महत्त्वपूर्ण सार्वजनिक महत्त्व के मसले से जुड़ी है और यह न्यायपालिका की स्वायत्तता से संबंधित है।' इसके बाद वह आधे घंटे तक अपने निर्दोष होने के बारे में बोलते रहे। उन्होंने अपने मामूली बैंक बैलेंस और पीड़िता की प्रतिष्ठा को लेकर भी बातें कीं।

इससे कई सवाल खड़े होते हैं। जिन 26 न्यायाधीशों को पीड़िता का हलफनामा मिला, उनमें से केवल दो न्यायाधीशों को इस 'विशेष पीठ की सुनवाई' में शामिल क्यों किया गया? जैसा कि गोगोई ने दावा किया यौन शोषण की शिकायत भला किस तरह न्यायपालिका की स्वायत्तता को प्रभावित करती है? शिकायतकर्ता को इस विशेष पीठ के समक्ष उपस्थित होने की इजाजत क्यों नहीं दी गई? अंतिम प्रश्न महत्त्वपूर्ण है क्योंकि कानून के मुताबिक शिकायत समिति के शिकायत स्वीकार करने के लिए प्रधान न्यायाधीश की इजाजत आवश्यक है। प्रधान न्यायाधीश के विरुद्ध सुनवाई के लिए कोई प्रक्रिया नहीं है। कथित पीड़ित की सुनवाई की अनुपस्थिति में अदालत ने एक वक्तव्य जारी किया जिस पर केवल न्यायमूर्ति मिश्रा और खन्ना के हस्ताक्षर थे। मीडिया से कहा गया कि वह जिम्मेदारी भरा व्यवहार करे और विचार करे कि क्या ऐसे फिजूल और विवाद पैदा करने वाले आरोपों को प्रकाशित करना है? ध्यान रहे कि मामले का परीक्षण बिना पीड़ित से प्रश्न-प्रतिप्रश्न किए कर लिया गया। स्वतंत्र जांच का सुझाव क्यों नहीं दिया गया? शिकायतकर्ता के प्रक्रिया में शामिल न होने के बाद भी उसकी विश्वसनीयता का संदर्भ और उसके कथित आपराधिक रिकॉर्ड का जिक्र अस्वाभाविक था। इस बात की अनदेखी मुश्किल है कि सर्वोच्च न्यायालय ने शिकायत को लेकर न्यूनतम कानूनी प्रक्रिया तक का पालन नहीं किया, जो उसे करना चाहिए था।

अजय मोहंती

फंसे कर्ज की निपटान प्रक्रिया पर हो पुनर्विचार

आरबीआई के फरवरी सर्कुलर पर आया उच्चतम न्यायालय का फैसला फंसे हुए कर्जों के निपटान को लेकर नया नजरिया अपनाने का मौका देता है। बता रहे हैं **तमाल बंद्योपाध्याय**

भारतीय रिजर्व बैंक (आरबीआई) के फरवरी 2018 में जारी सर्कुलर को निरस्त करने के उच्चतम न्यायालय के फैसले के बाद केंद्रीय बैंक फंसे कर्जों की समस्या से निपटने के लिए संशोधित सर्कुलर जारी करने वाला है। एशिया की तीसरी बड़ी अर्थव्यवस्था भारत में कर्जों का पुनर्भुगतान न होना एक बड़ी समस्या बना हुआ है। इसी समस्या के हल के लिए बैंकिंग नियामक ने बैंकिंग अधिनियम की धारा 35एए के तहत मिली शक्तियों के तहत फरवरी 2018 में एक सर्कुलर जारी किया था। उसमें केंद्र सरकार को यह शक्ति दी गई थी कि वह बैंकों को कर्ज निपटान प्रक्रिया शुरू करने का निर्देश देने के लिए आरबीआई को अधिकृत कर सकती है। मई 2017 में बैंकिंग अधिनियम में जोड़ी गई धारा 35एए की वैधता पर उच्चतम न्यायालय ने सवाल नहीं उठाए हैं लेकिन वह इसके इस्तेमाल के तरीके को लेकर संतुष्ट नहीं है। सरल शब्दों में कहें तो अधिनियम की यह धारा आरबीआई को बैंकों को फंसे कर्ज के निपटान का निर्देश देने का 'विवेकाधिकार' देती है लेकिन इसे एक 'नियम' के तौर पर नहीं देखा जा सकता है।

भले ही उच्चतम न्यायालय का यह फैसला कर्ज निपटान प्रक्रिया को बाधित करेगा लेकिन प्रक्रिया पटरी से नहीं उतरेगी। हालांकि कर्जों की वसूली के लिए सरकार को अधिकार दिए जाने के पहले भी बैंकिंग नियामक इस कानून की धारा 35 और 21 के तहत अपने स्तर पर बैंकों के अग्रिम भुगतान से संबंधित नीतियों में दखल एवं उनके बहीखाते की जांच कर सकता था।

सवाल है कि बैंकिंग अधिनियम में संशोधन की जरूरत क्या थी? शायद सरकार फंसे कर्जों के चलते पैदा हुई समस्या दूर करने और चूककर्ता कंपनियों को सबक सिखाने में सक्रिय भूमिका निभानी चाहती थी। या फिर सरकार कंपनी जगत को यह दिखाना चाहती थी कि कर्ज संकट के खिलाफ लड़ाई में आरबीआई अकेले नहीं है, उसे सरकार का भी समर्थन हासिल है। सरकार और आरबीआई दोनों के ही एक साथ खड़े होने से बैंकिंग प्रणाली का मजाक बनाकर रख देने वाले 'दोस्ताना पूंजीपतियों' को नियामक एवं सरकार के बीच पंचायत की कोशिश नहीं करनी चाहिए।

एक तरह से फरवरी सर्कुलर के निर्देशों ने आरबीआई को एक सूक्ष्म प्रबंधक की भूमिका में पुनर्स्थापित कर दिया था। इस बदलाव का यह कहते हुए बचाव किया जा सकता है कि असाधारण समय में असाधारण कदम की जरूरत होती है लेकिन अब यह निर्देश निरस्त किया जा चुका है, लिहाजा आरबीआई इसे फंसे कर्जों के निपटान प्रक्रिया पर नई नजर डालने के एक मौके के रूप में देख सकता है। इसका काम जमाकर्ताओं के हितों को सुरक्षित रखना है, कर्ज चूककर्ताओं का पीछा करना नहीं। यह काम बैंकरों पर ही छोड़ देना चाहिए। अगर वे अपना काम अच्छी तरह नहीं करते हैं तो उन पर कड़ी कार्रवाई नहीं होनी चाहिए?

कर्ज बांटने के धंधे में कुछ मामले निर्यात बाजार लुढ़कने, स्थानीय मुद्रा में अचानक गिरावट आने, नियामकीय मंजूरियों में अनुचित विलंब और कच्चे माल की आपूर्ति या गलत कारोबारी मॉडल के चलते बिगड़ सकते हैं। कुछ भ्रष्ट प्रवर्तक भी हैं जो कर्ज इसीलिए लेते हैं क्योंकि उसे लौटाना नहीं है और भ्रष्ट बैंकर भी, जो रकम वापस न मिलने की आशंका होते हुए भी कर्ज बांट देते हैं। आरबीआई ने 1990 के दशक के मध्य में परियोजनाओं को वित्त देने वाले संस्थानों और वाणिज्यिक बैंकों के बीच की विभाजक रेखा हटा दी थी और सभी तरह के कर्ज देने वाली सार्वभौम बैंकिंग सुविधा की अवधारणा सामने आई थी। वाणिज्यिक बैंकों की विशेषज्ञता केवल कार्यशील पूंजी वाले कर्जों में ही होने से परियोजना वित्तपोषण के नए कारोबार में उनकी अंगुलियां जल गईं और यहीं से कर्जों के फंसने का समूचा संकट शुरू हुआ। भारतीय अर्थव्यवस्था का स्वर्णिम दौर कहे जाने वाले वर्ष 2006-08 के दौरान बैंक ऋण देश के सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) का तिगुना हो गया था। लेकिन अमेरिकी निवेश बैंक लीमन ब्रदर्स होल्डिंग्स इंक के धराशायी होने के बाद दुनिया भर में वित्तीय संकट पैदा हो गया था। उस स्थिति में अपनाई गई बेहद नरम मौद्रिक नीति ने बैंकों को अधिक कर्ज बांटने और उपभोग मांग बढ़ाने के लिए प्रोत्साहित किया।

ऐसे में अचरज नहीं है कि जल्द ही बैंकों के कर्ज पोर्टफोलियो में दरारें दिखने लगीं लेकिन बैंक उन्हें छुपाने की कोशिश करते रहे। बैंकिंग परिसंपत्तियों में करीब 70 फीसदी की हिस्सेदारी रखने वाले सार्वजनिक बैंकों के अधिकारी कर्ज पुनर्गठन के जरिये इस संकट को टालने की भरसक कोशिश करते रहे लेकिन उससे फंसे कर्जों का ढेर ही बढ़ता रहा। दिवालिया कानून लागू होने तक तो काफी देर हो चुकी थी।

बैंकर उस समय भी हालात को नकारते रहे। कर्ज फंसने के मामले बढ़ने पर बैंकों को उनके लिए अलग प्रावधान करने पड़ते हैं क्योंकि उस पर उन्हें कोई ब्याज नहीं मिल रहा होता है। यह दोहरी मार की तरह है जिससे बैलेंस शीट भी प्रभावित होती है। भला कोई अपना घाटा क्यों दिखाना चाहेगा? ऊंचे प्रावधानों ने पूंजी को भी कम कर दिया। वह पूंजी कहां से आएगी? बैंकरों ने इस समस्या का एक आसान रास्ता निकाला। फंसे कर्जों से होने वाली ब्याज क्षति और वित्तीय प्रावधानों की भरपाई के लिए बैंकों ने अन्य कर्जदारों से ऊंचा ब्याज लेना और जमाकर्ताओं को कम ब्याज देना शुरू कर दिया। कर्जे फंसने की गंभीर समस्या से निपटने का यह विशुद्ध भारतीय 'जुगाड़' था।

अच्छे कर्जदारों और जमाकर्ताओं को बैंकों की इस नाकामी का खमियाजा क्यों भुगतना चाहिए? जब कोई कर्जदार किस्तों को अदा करना बंद कर देता है तो बैंक को वह खाता खराब घोषित करके उसके लिए अलग से धन का इंतजाम करना चाहिए। इस प्रक्रिया में अगर उसकी पूंजी में कमी आती है तो मालिक को नई पूंजी डालनी चाहिए। अगर बैंक जोखिम प्रबंधन, ऋण खातों की निगरानी और फंसे कर्जों की पहचान का अपना काम सही तरह से नहीं कर रहा है तो आरबीआई को उसके प्रबंधन को बाहर का रास्ता दिखा देना चाहिए।

भारत की दो अनूठी अवधारणाओं- 'इरादतन चूककर्ता' और 'तकनीकी रूप से बट्टे खाते में डाल देना' (राइट-ऑफ) ने भी ऋण प्रबंधन को जटिल बना दिया। 'इरादतन चूककर्ता' का आशय उस कर्जदार से है जिसने आवंटित कर्ज का इस्तेमाल कहीं और कर दिया है। वहीं राइट-ऑफ एक अकाउंटिंग गतिविधि है जिसमें कर्ज को बट्टे खाते में डालकर बैंक की बैलेंस शीट से हटा दिया जाता है लेकिन उसे कुछ शाखाओं में डाल दिया जाता है। जब उस कर्ज की वसूली हो जाती है तो वह राशि बैंक की लाभपरकता में जुड़ जाती है। ऐसे तकनीकी राइट-ऑफ के लिए कोई सर्वमान्य मानक नहीं है। प्रबंधन के अपने विवेक से किए जाने वाले ऐसे राइट-ऑफ ने ही बैंकों का कर्ज कम फंसे होने का भ्रम पैदा किया है जबकि बीते दशक में लाखों करोड़ रुपये बट्टे खाते में डाले जा चुके हैं।

आरबीआई की दिसंबर में संपन्न बैंकिंग प्रणाली की छमाही समीक्षा के बाद जारी वित्तीय स्थिरता रिपोर्ट के मुताबिक फंसे कर्जों के ढेर में कुछ कमी आनी शुरू हो गई है। भारतीय बैंकिंग उद्योग की कुल लोन-बुक में फंसे कर्जों का प्रतिशत मार्च 2018 के 11.5 फीसदी से घटकर सितंबर 2018 में 10.8 फीसदी पर आ गया था। आरबीआई को उम्मीद है कि मार्च 2019 की छमाही में यह 10.3 फीसदी के स्तर पर आ जाएगा।

यह एक अच्छी खबर है लेकिन बैंकों और आरबीआई दोनों को ही यह भूलना नहीं चाहिए कि कंपनियों को नई जिंदगी देना दिवालिया कानून के केंद्र में है और बैंकों को उनका बकाया मिल जाना उसका उप-उत्पाद भर है।

(लेखक बिज़नेस स्टैंडर्ड के सलाहकार संपादक और जन स्मॉल फाइनैंस बैंक लिमिटेड के वरिष्ठ परामर्शदाता हैं)

धरती बचाने के लिए हमें खुद बनना होगा बदलाव का जरिया

जमीनी हकीकत

सुनीता नारायण

अब यह साफ है कि इस 'एन्थ्रोपोसीन' युग में पर्यावरण सुरक्षा को सबसे ज्यादा नुकसान हुआ है। यह सर्वविदित है कि यह दुनिया निर्धारित सीमाओं के भीतर रहने की अपनी क्षमता तेजी से खोती जा रही है। स्वास्थ्य से जुड़े स्थानीय संकट की खबरें हमारे इर्दगिर्द छाने लगी हैं। ऐसा पर्यावरण के हमारे कुप्रबंधन और जलवायु परिवर्तन के असर के वैश्विक अस्तित्ववादी संकट के कारण हो रहा है।

ऐसे में हम क्या कर सकते हैं? हम सभी हालात बदलना चाहते हैं। हम पर्यावरण की साफ-सफाई और संरक्षण में योगदान चाहते हैं। हम शिद्दत से जरूरत महसूस किए जा रहे बदलावों का हिस्सा बनना चाहते हैं। हम जिस हवा में सांस लेते हैं वह इतनी दूषित हो चुकी है कि हमारे स्वास्थ्य के लिए खतरनाक है। हमारी नदियां कूड़े-कचरे और गंदे पानी से खत्म हो रही हैं। हमारे जंगलों पर भी खतरा मंडरा रहा है। हम जानते हैं कि अपना पर्यावरण बचाने के लिए काफी कुछ किया जाना है क्योंकि इसके बगैर हमारी धरती का वजूद ही दांव पर होगा।

हम इन चीजों के बारे में जानते हैं लेकिन सवाल यह है कि किया क्या जा सकता है? क्या कुछ ऐसा है जो हम एक इंसान या स्कूल, कॉलेज, कॉलोनी एवं सोसाइटी के तौर पर सामूहिक रूप से कर सकते हैं? क्या हम भी अपना योगदान दे सकते हैं? अगर हां तो फिर कैसे? हम ऐसा कर सकते हैं। बहुत साल पहले महात्मा गांधी ने कहा था कि हम दुनिया में जो भी बदलाव लाना चाहते हैं, उसे पहले हमें खुद पर लागू करना चाहिए। हमें आज भी वही काम करने की जरूरत है।

यह साफ है कि हमारी जीवनशैली ने पर्यावरण पर खासा असर डाला है। हमारी गतिविधियों और उन्हें अंजाम देने के तरीकों का अहम फर्क होता है। इसीलिए बदलाव की दिशा में पहला कदम यह है कि हम अपने कार्यों को लेकर जागरूक हों। मसलन, हमें पता हो कि हम कितना पानी और बिजली इस्तेमाल कर रहे हैं और उससे कितना अवशिष्ट पैदा होता है? ऐसा तभी हो सकता है जब हम अपने तौर-तरीके इस तरह बदलें कि संसाधनों का कम-से-कम इस्तेमाल हो और उससे अवशिष्ट भी कम-से-कम पैदा हों। 'धरती पर ज्यादा बोझ न डालना' ही हमारा आदर्श होना चाहिए।

हमें बदलावों को आत्मसात करना होगा। पानी के ही मुद्दे पर गौर करें तो एक तरफ पानी का संकट बढ़ता जा रहा है तो दूसरी तरफ उपलब्ध जल दूषित होता जा रहा है। इसका जवाब इन पंक्तियों में निहित है:

पहला, पानी की हरेक बूंद बचाकर हमें अपने जल संसाधनों को बढ़ाना है। हम वर्षा-जल का इस तरह संचय करें कि हरेक छत और सतह जल संकलन के काम आए। केवल सरकार का ही काम नहीं है, हमें भी इस समाधान का अंग बनना होगा। ऐसा करना हमारी पहुंच में भी है। हरेक गांव, स्कूल, कॉलोनी और संस्थान को बारिश का पानी रोकने, उसके संचयन और बारिश की हरेक बूंद को अहमियत देनी होगी।

हमें पानी की अपनी मांग कम करने पर भी ध्यान देना चाहिए। हम यह सुनिश्चित कर सकते हैं कि पानी व्यर्थ में नहीं बहाएंगे और गंदे पानी को दोबारा इस्तेमाल में लाने लायक बनाया जा सके। हमें अपने रसोईघरों, स्नानघरों और बागीचों में पानी के कम-से-कम इस्तेमाल के तरीके भी निकालने होंगे। हालांकि ऐसा कर पाना हमेशा हमारे हाथ में नहीं होता है क्योंकि गंदा पानी घरों से निकलने के बाद सीवेज में चला जाता है।

लेकिन यह भी एक सच है कि कई घर खराब पानी के संग्रहण के मामले में आत्मनिर्भर भी होते हैं। उन घरों में सेप्टिक टैंक और अवशिष्ट जमा करने वाले बॉक्स बने होते हैं और वहां से उस कचरे को खुले नाले या जमीन तक ले जाया जाता है। इन प्रणालियों को गंदे पानी के शोधन, दोबारा इस्तेमाल के लिए बनाए गए और पानी के पुनर्चक्रण से स्थानीय स्तर पर जोड़ा जा सकता है। लेकिन असली बात यह है कि हमें खराब पानी को दोबारा इस्तेमाल लायक बनाने के लिए काम करना होगा।

कचरे के साथ भी यही बात है। अगर हम अपने कचरे का विश्लेषण करें तो पता चलेगा कि हम कितना कचरा पैदा करते हैं। लेकिन अगर हम गीले कचरे को अलग रखें तो हम अपने कचरे की संरचना समझ जाएंगे। प्लास्टिक, सीसा, धातु को एक तरफ और खानपान अवशिष्ट, पत्तियों और सड़ जाने वाले दूसरे जैविक कचरों को एक तरफ रखा जाए। जब हम यह संरचना समझ लेंगे तो फिर हम उसका प्रबंधन भी कर सकते हैं। मसलन, जल्द नष्ट होने वाले जैविक कचरे से कंपोस्ट खाद बनाई जा सकती है। इसी तरह प्लास्टिक, सीसा और धातुओं को रिसाइकल किया जा सकता है। लेकिन अधिक अहम बात यह है कि इससे हमें यह पता चल जाएगा कि जल्दी नष्ट न होने वाला कचरा किन चीजों से पैदा होता है और फिर हम उसी हिसाब से अपनी योजना बना सकते हैं। हम ऐसा कर सकते हैं।

हम अपनी ऊर्जा जरूरतों में कटौती करते हुए भी योगदान दे सकते हैं। ऊर्जा उपकरणों की सक्षमता और प्रचुरता के जरिये हम ऊर्जा उपभोग में कटौती कर सकते हैं। वे अपने घरों और संस्थानों में नवीकरणीय ऊर्जा का इस्तेमाल बढ़ाने की दिशा में भी काम कर सकते हैं। ये छोटे-छोटे कदम बड़ी छलांग का आधार तैयार करते हैं।

मेरी संस्था सेंटर फॉर साइंस ऐंड एनवायरनमेंट (सीएसई) ने एक हरित स्कूल कार्यक्रम तैयार किया है जिसमें स्कूल पर्यावरणीय बदलावों पर भाषण नहीं देते हैं बल्कि उनका पालन करते हैं। इस कार्यक्रम में छात्र और शिक्षक मिलकर अपने स्कूल का पर्यावरणीय बेंचमार्क तय करते हैं। मसलन, वे कितना पानी, बिजली या वाहन इस्तेमाल करते हैं और कितना कचरा एवं प्रदूषण पैदा होता है? उस फुटप्रिंट के आधार पर वे अपने पर्यावरण को दुरुस्त करने के कदम उठा सकते हैं। वे बदलाव का सबब खुद बनते हैं। मुझे भरोसा है कि अगर हरेक स्कूल और घर इन गतिविधियों में सक्रिय हों तो उसका प्रभाव दूरगामी और अधिक होगा। हम जिंदगी के इन सबकों को खुद जिंदगी बना सकते हैं। यही हमारे लिए आगे की राह भी है।

कानाफूसी

शिकायतों की होड़

निर्वाचन आयोग की ओर से जारी एक रिपोर्ट दर्शाती है कि तमिलनाडु के राजनीतिक दल, खासतौर पर दोनों बड़े राजनीतिक दलों के बीच एक अलग किस्म की होड़ चल रही है। इसे सकारात्मक तो कतई नहीं कहा जा सकता है। दरअसल दोनों दल आदर्श आचार संहिता के उल्लंघन के मामलों को लेकर होड़ में नजर आ रहे हैं। राज्य में 19 अप्रैल तक उल्लंघन की कुल 4,690 शिकायतें दर्ज की गईं। इनमें से करीब 1,450 शिकायतें सत्ताधारी अखिल भारतीय अन्ना द्रमुक के खिलाफ की गई थीं। तो वहीं 1,694 शिकायतें प्रमुख विपक्षी दल द्रविड़ मुन्नेत्र कषगम के खिलाफ की गईं। छोटे दल भी इस मामले में पीछे नहीं हैं और उनके खिलाफ कुल मिलाकर 1,546 शिकायतें दर्ज हैं। अधिकांश शिकायतें संपत्ति को नुकसान पहुंचाने की हैं। राज्य के दक्षिणी हिस्से से 1,368 शिकायतें आईं। इनमें मदुरै, रामनाथपुरम, शिवगंगा, तेनी, तुत्तुकुडी और कन्याकुमारी जैसे क्षेत्र शामिल हैं।

चुनावी पुरस्कार

वाई एस जगनमोहन रेड्डी के राजनीतिक प्रचार में शामिल लोगों के लिए तो अच्छे दिन आ चुके हैं। उनके लिए काम करने वालों को एक महीने की छुट्टियां दी गई हैं, वह भी वेतन समेत। छोटे कर्मचारियों को जहां वेतन सहित छुट्टियां दी गई हैं, वहीं वरिष्ठ कर्मचारियों को छुट्टियां बिताने की जगह चुनने की स्वतंत्रता भी दी गई है। रेड्डी के साथ फिलहाल केवल 20 लोगों की कोर टीम को ही काम पर रखा गया है। उनसे भी वादा किया गया है कि अगर चुनाव नतीजे अच्छे रहे तो उन्हें पुरस्कृत किया जाएगा।

आपका पक्ष

लिवर संबंधित रोग में जागरूकता जरूरी

विगत 19 अप्रैल को वर्ल्ड लिवर डे मनाया गया। लिवर मानव शरीर का एक महत्त्वपूर्ण अंग होने के साथ-साथ इससे जुड़ी बीमारियां दिन प्रतिदिन बढ़ती जा रही हैं। विश्व स्वास्थ्य संगठन के मुताबिक भारत में किसी बीमारी की वजह से मृत्यु होने की प्रमुख वजह लिवर है। उनके मुताबिक भारत में 10वें व्यक्ति की लिवर से जुड़ी बीमारी से मृत्यु हो जाती है। टाटा मेमोरियल के मुताबिक कैंसर मौत में भारत में लिवर कैंसर तीसरे स्थान पर है। इसका अर्थ यह है कि लिवर से संबंधित बीमारियों में वृद्धि के साथ यह घातक बीमारी का रूप ले रही है। लिवर शरीर का सबसे बड़ा अंग है और यह पाचन क्रिया संपन्न करता है। इसके अलावा रक्त के थक्के में, खून का शुद्धीकरण, कोलेस्ट्रॉल को नियंत्रण करने में लिवर का प्रमुख योगदान है। लिवर ठीक नहीं होने पर मधुमेह जैसी बीमारियां जकड़ लेती हैं। अत: सरकार को इस बीमारी को दूर करने के लिए उपाय करने की जरूरत है। सरकारी अस्पतालों में लिवर विशेषज्ञों अथवा डॉक्टरों की नियुक्ति होनी चाहिए। मरीजों को लिवर से संबंधित बीमारियों की दवाएं मुफ्त में मुहैया करानी चाहिए। हर साल सरकारी अस्पतालों की ओर से ग्रामीण इलाकों में कार्यक्रम और अभियान चलाना चाहिए ताकि लोग लिवर रोग के प्रति जागरूक हो सकें।

डब्ल्यूएचओ के मुताबिक देश में 10वें व्यक्ति की मृत्यु लिवर से जुड़ी बीमारी से हो जाती है

निशांत महेश त्रिपाठी, नागपुर

झूठे वादों में न फंसे मतदाता

लोकसभा चुनाव के मद्देनजर दो प्रमुख दलों के घोषणा पत्र में कोई भी वादा पूर्ण होना संभव नहीं लगता है। ऐसे वादे किए गए हैं जिन्हें पूरा करने में कई अड़चनें आ सकती हैं। चुनाव की तारीख आने से पहले चुनावी सभाओं में नेताओं का एक दूसरे पर आरोप-प्रत्यारोप तथा बयानबाजी का दौर चरम पर है। हाल ही में कुछ नेताओं ने विवादित बयान दिए हैं जिसके बाद उनकी कड़ी आलोचना भी की गई है। हाल में आजम खान ने महिला संबंधित एक विवादित बयान दे दिया था जिसकी काफी आलोचना हुई। प्रत्येक लोकतांत्रिक देश के लिए चुनाव काफी महत्त्वपूर्ण होता है। भारत में पार्टी जनता के हितों से परे सिर्फ सत्ता के लिए लड़ते नजर आती हैं। कुछ मामलों में लोगों को उनके वोट के बदले पैसों का लालच दिया जा रहा है। इस लालच का लोगों को नेताओं द्वारा की जाने वाली चुनावी घोषणाओं से पता चल सकता है। लेकिन पैसों का लालच सीधे नहीं दिया जा रहा है बल्कि इसका स्वरूप बदल दिया गया है। लोगों को यह समझना चाहिए कि लोग राजनीतिक दलों के बुने जाल में फंसते चले जा रहे हैं और पार्टी ऐसे ही झूठे वादों के जाल में फंसाती जा रही हैं। वर्तमान में इतनी सूचना तकनीक होने के बावजूद अगर हमने एक अच्छी सरकार नहीं चुनी तो आने वाले समय में हम और पीछे चले जाएंगे। भले ही विदेश में भारत का गुणगान किया जाता हो लेकिन देश के अंदर के हालात कुछ ठीक नहीं लगते हैं। जब तक पार्टी को सिर्फ सत्ता का लालच रहेगा तब तक देश आगे नहीं बढ़ सकता है। आम जनता को सूझबूझ के साथ मतदान करने की जरूरत है।

अ

पाठक अपनी राय हमें इस पते पर भेज सकते हैं : संपादक, बिजनेस स्टैंडर्ड लिमिटेड, 4, बहादुर शाह जफर मार्ग, नई दिल्ली - 110002. आप हमें ईमेल भी कर सकते हैं : lettershindi@bsmail.in उस जगह का उल्लेख अवश्य करें, जहां से आप ईमेल कर रहे हैं।